www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

गायत्री मंत्र के भ अक्षर की व्याख्या

मानसिक संतुलन

श्रीराम शर्मा आचार्य

: BOOK MADE AVAILABLE FOR DIGITIZATION BY :

VICHARKRANTI PUSTAKALAY
SURAT, INDIA

: OUR MAIN CENTERS :

Shantikunj, Haridwar,
Uttaranchal, India – 249411
Phone no : 91-1334- 260602,
Website : www.awgp.org
E-mail : shantikunj@awgp.org

Gayatri Tapobhumi,
Mathura, U.P., India – 281003
Phone no : 91-0565-2530128,
Website : www.awgp.org
E-mail : yugnirman@awgp.org

: BOOK DIGITIZED BY :

Vicharkranti Pustakalay, Thana-Faliya, Dindoligam, Surat-394210, Gujarat, India
E-mail: vicharkranti.awgp@gmail.com | Website : www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

मानसिक संतुलन

गायत्री मंत्र का नौवाँ अक्षर 'भ' हमको प्रत्येक स्थिति में मानसिक भावों को संतुलित रखने की शिक्षा देता है–

भ-भवोद्विग्नमना नैव हृदुद्वेगं परित्यज।
कुरु सर्वास्ववस्थासु शांतं संतुलितं मनः॥

अर्थात–"मानसिक उत्तेजनाओं को छोड़ दो। सभी अवस्थाओं में मन को शांत और संतुलित रखो।"

शरीर में उष्णता की मात्रा अधिक बढ़ जाना 'ज्वर' कहलाता है और वह ज्वर अनेक दुष्परिणामों को उत्पन्न करता है। वैसे ही मानसिक ज्वर होने से उद्वेग, आवेश, उत्तेजना, मदहोशी, आतुरता आदि लक्षण प्रकट होते हैं। आवेश की प्रबलता मनुष्य के ज्ञान, विचार, विवेक को नष्ट कर डालती है। उस समय वह न सोचने लायक बातें सोचता है और जो कार्य पहले कुत्सित जान पड़ते थे, उन्हीं को करने लगता है। ऐसी स्थिति मानव जीवन के लिए सर्वथा अवांछनीय है। विपत्ति पड़ने पर अथवा किसी प्रकार का लड़ाई-झगड़ा हो जाने पर लोग चिंता, शोक, निराशा, भय, घबराहट, क्रोध आदि के वशीभूत होकर मानसिक शांति को खो बैठते हैं। इसी प्रकार कोई बड़ी सफलता मिल जाने पर या संपत्ति प्राप्त होने पर मद, मत्सर, अति हर्ष, अति भोग आदि दोषों में फँस जाते हैं। इस तरह कोई भी उत्तेजना मनुष्य की आंतरिक स्थिति को विक्षिप्तों की सी कर देती है। इसके फल से मनुष्य को तरह-तरह के अनिष्ट परिणाम भोगने पड़ते हैं।

जिन लोगों की प्रवृत्ति ऐसी उत्तेजित होने वाली अथवा शीघ्र ही आवेश में आ जाने वाली होती है, वे प्रायः मानसिक निर्बलता के शिकार होते हैं। वे अपने मन को एकाग्र करके किसी एक काम में नहीं लगा सकते और इसलिए कोई बड़ी सफलता पाना भी उनके लिए असंभव हो

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

जाता है। उनके अधिकांश विचार क्षणिक सिद्ध होते हैं। इस प्रकार मानसिक असंतुलन मनुष्य की उन्नति में बाधा स्वरूप बनकर उसे पतन की ओर प्रेरित करने का कारण बन जाता है।

असंतुलन असफलता का मूल कारण है

मानसिक असंतुलन की अशांत दशा में कोई व्यक्ति न तो सांसारिक उन्नति कर सकता है और न आध्यात्मिक प्रगति संभव होती है। कारण यह है कि उन्नति के लिए, ऊँचा उठने के लिए जिस बल की आवश्यकता होती है; वह बल मानसिक अस्थिरता के कारण एकत्रित नहीं हो पाता। जिस प्रकार हाथ काँप रहा हो तो उस समय बंदूक का निशाना नहीं साधा जा सकता, उसी प्रकार आवेश या उत्तेजना की दशा में मानसिक कंपन की अधिकता रहती है। उस उद्विग्नता की दशा में यह निर्णय करना कठिन होता है कि क्या करना चाहिए और क्या न करना चाहिए।

मानसिक असंतुलन और उत्तेजना से अधीरता का भाव उत्पन्न होता है। अधीर होना हृदय की संकीर्णता और आत्मिक बालकपन का चिह्न है। बच्चे जब बाग लगाने का खेल खेलते हैं तो उनकी कार्य प्रणाली विचित्र होती है। अभी बीज बोया, अभी उसमें खाद-पानी लगाया, अभी दो-चार मिनट के बाद ही बीज को उलट-पलटकर देखते हैं कि बीज में से अंकुर फूटा या नहीं। जब अंकुर नहीं दीखता तो उसे फिर गाड़ देते हैं और दो मिनट बाद फिर देखते हैं। इस प्रकार कई बार देखने पर भी जब वृक्ष उत्पन्न होने की उनकी कल्पना पूरी नहीं होती तो दूसरा उपाय काम में लाते हैं। वृक्षों की टहनियाँ तोड़कर मिट्टी में गाड़ देते हैं और उससे बाग की लालसा को बुझाने का प्रयत्न करते हैं। उन टहनियों के पत्ते उठा-उठाकर देखते हैं कि फल लगे या नहीं। यदि दस-बीस मिनट में फल नहीं लगते तो कंकड़ों को डोरे से बाँधकर टहनियों में लटका देते हैं। इस अधूरे बाग से उन्हें तृप्ति नहीं मिलती। फलतः कुछ देर बाद उस बाग को बिगाड़कर चले जाते हैं। कितने ही जवान और वृद्ध पुरुष भी उसी प्रकार की बाल-क्रीड़ाएँ अपने क्षेत्र में किया करते हैं, किसी काम को बड़े उत्साह से आरंभ करते हैं, इस 'उत्साह' की अति उतावली बन जाती है। कार्य आरंभ हुए देर नहीं होती कि यह देखने लगते हैं कि सफलता में

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अभी कितनी देर है। जरा भी प्रतीक्षा उन्हें सहन नहीं होती। जब उन्हें थोड़े ही समय में रंगीन कल्पनाएँ पूरी होती नहीं दीखतीं तो निराश होकर उसे छोड़ बैठते हैं। अनेक कार्यों को आरंभ करना और उन्हें बिगाड़ना, ऐसी ही बाल-क्रीड़ाएँ वे जीवन भर करते रहते हैं। छोटे बच्चे अपनी आकांक्षा और इच्छापूर्ति के बीच में किसी कठिनाई, दूरी या देरी की कल्पना नहीं कर पाते, इन बाल-क्रीड़ा करने वाले अधीर पुरुषों की भी मनोभूमि ऐसी ही होती है। यदि हथेली पर सरसों न जमी तो खेल बिगाड़ते हुए उन्हें देर नहीं लगती।

प्राचीन समय में जब शिष्य विद्याध्ययन के लिए गुरु के पास जाता था तो उसे पहले अपने धैर्य की परीक्षा देनी होती थी। गौएँ चरानी पड़ती थीं, लकड़ियाँ चुननी पड़ती थीं, उपनिषदों में इस प्रकार की अनेक कथाएँ हैं। इंद्र को भी लंबी अवधि तक इसी प्रकार तपस्यापूर्ण प्रतीक्षा करनी पड़ी थी, जब वह अपने धैर्य की परीक्षा दे चुका, तब उसे आवश्यक विद्या प्राप्त हुई। प्राचीन काल में विज्ञपुरुष जानते थे कि धैर्यवान पुरुष ही किसी कार्य में सफलता प्राप्त कर सकते हैं, इसलिए धैर्यवान स्वभाव वाले छात्रों को ही विद्याध्ययन कराते थे। क्योंकि उनके पढ़ाने का परिश्रम भी अधिकारी छात्रों द्वारा ही सफल हो सकता था। चंचल चित्त वाले, अधीर स्वभाव के मनुष्य का पढ़ना न पढ़ना बराबर है। अक्षरज्ञान हो जाने या अमुक कक्षा का सर्टिफिकेट ले लेने से कोई विशेष प्रयोजन सिद्ध नहीं होता।

आतुरता एवं उतावली का स्वभाव जीवन को असफल बनाने वाला एक भयंकर खतरा है। कर्म को परिपक्व होने में समय लगता है। रूई को कपड़े के रूप तक पहुँचने के लिए कई कड़ी मंजिलें पार करनी होती हैं और कठोर व्यवधानों में होकर गुजरना पड़ता है, जो संक्रांति काल के मध्यवर्ती कार्यक्रम को धैर्यपूर्वक पूरा होने देने की प्रतीक्षा नहीं कर सकता, उसे रूई को कपड़े के रूप में देखने की आशा न करनी चाहिए। किया हुआ परिश्रम एक विशिष्ट प्रक्रिया के द्वारा फल बनता है। इसमें देर लगती है और कठिनाई भी आती है। कभी-कभी परिस्थितिवश यह देरी और कठिनाई आवश्यकता से अधिक भी हो सकती है। उसे पार करने के लिए समय और श्रम लगाना पड़ता है। कभी-कभी तो कई बार का प्रयत्न

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

भी सफलता तक नहीं ले पहुँचता, तब अनेक बार अधिक समय तक अविचल धैर्य के साथ जुटे रहकर अभीष्ट सिद्धि को प्राप्त करना होता है। आतुर मनुष्य इतनी दृढ़ता नहीं रखते, जरा सी कठिनाई या देरी से वे घबरा जाते हैं और मैदान छोड़कर भाग निकलते हैं। यही भगोड़ापन उनकी पराजयों का इतिहास बनता जाता है।

चित्त का एक काम पर न जमना, संशय और संकल्प-विकल्पों में पड़े रहना एक प्रकार का मानसिक रोग है। यदि काम पूरा न हो पाया तो? यदि कोई आकस्मिक आपत्ति आ गई तो? यदि फल उलटा निकला तो? इस प्रकार की दुविधापूर्ण आशंकाएँ मन को डाँवाडोल बनाए रहती हैं। पूरा आकर्षण और विश्वास न रहने के कारण मन उचटा-उचटा सा रहता है। जो काम हाथ में लिया हुआ है, उस पर निष्ठा नहीं होती। इसलिए आधे मन से वह किया जाता है। आधा मन दूसरे काम की खोज में लगा रहता है। इस डाँवाडोल स्थिति में एक भी काम पूरा नहीं हो पाता। हाथ के काम में सफलता नहीं मिलती। बल्कि उलटी भूल होती जाती है, ठोकर पर ठोकर लगती जाती हैं। दूसरी ओर आधे मन से जो नया काम तलाश किया जाता है, उसके हानि-लाभों को भी पूरी तरह नहीं विचारा जा सकता। अधूरी कल्पना के आधार पर नया काम वास्तविक रूप में नहीं, वरन आलंकारिक रूप में दिखाई पड़ता है। पहले काम को छोड़कर नया पकड़ लेने पर फिर उस नए काम की भी वही गति होती है जो पुराने की थी। कुछ समय बाद उसे भी छोड़कर नया ग्रहण करना पड़ता है। इस प्रकार 'काम शुरू करना और उसे अधूरा छोड़ना' इस कार्यक्रम की बराबर पुनरावृत्ति होती रहती है और अंत में मनुष्य को अपने असफल जीवन पर पश्चात्ताप करने के सिवा कुछ हाथ नहीं लगता।

मानसिक असंतुलन से आध्यात्मिक पतन

मानसिक असंतुलन से केवल सांसारिक और भौतिक क्षेत्र में ही हानि नहीं उठानी पड़ती, वरन आध्यात्मिक दृष्टि से भी उसका परिणाम अनिष्टकारी होता है। जो लोग मानसिक उत्तेजना के शीघ्र वशीभूत हो जाते हैं, उनमें अभिमान और लोभ की मात्रा भी बढ़ जाती है और ये दोनों तत्त्व अन्य अनेक प्रकार के दोषों की उत्पत्ति करते हैं। अभिमान एक प्रकार का नशा है, जिसमें

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

मदहोश होकर मनुष्य अपने को दूसरों से बड़ा और दूसरों को अपने से छोटा समझता है। वह इस बात को पसंद करता है कि दूसरे लोग उसकी खुशामद करें, उसे बड़ा समझें, उसकी बात मानें, जब इसमें कुछ कमी आती है तो वह अपना अपमान समझता है और क्रोध से साँप की तरह फुफकारने लगता है। वह नहीं चाहता कि कोई मुझसे धन में, विद्या में, बल में, प्रतिष्ठा में बड़ा या बराबर का हो, इसलिए जिस किसी को वह थोड़ा सुखी-संपन्न देखता है, उसी से ईर्ष्या-द्वेष करने लगता है। अहंकार की पूर्ति के लिए अपनी संपन्नता बढ़ाना चाहता है। संपन्नता सद्गुणों से, श्रम से, लगातार परिश्रम करने से मिलती है, पर अभिमान के नशे में चूर व्यक्ति इस सीधे-साधे मार्ग पर चलने में समर्थ नहीं होता, वह अनीति और बेईमानी पर उतर आता है।

अवमान का अर्थ है-आत्मा की गिरावट। अपने को दीन, तुच्छ, अयोग्य, असमर्थ समझने वाले लोग संसार में दीन-हीन बनकर रहते हैं। उनकी प्रतिभा कुंठित हो जाती है। कोई साहसिक कार्य उनसे बन नहीं पड़ता। संपन्नता प्राप्त करने और अपने ऊपर होने वाले अन्याय को हटाने के लिए जिस शौर्य की आवश्यकता है, वह अवमानग्रस्त मनुष्य में नहीं होता। फलस्वरूप वह न तो समृद्ध बन पाता है और न अन्याय के चंगुल से छूट पाता है। उसे गरीबी घेरे रहती है और कोई न कोई सताने वाला आए दिन अपनी तीर कमान ताने रहता है। इन कठिनाइयों से बचने के लिए उसे निर्बलतापूर्वक अनीतियों का आश्रय लेना पड़ता है। चोरी, ठगी, कपट, छल, दंभ, असत्य, पाखंड, व्यभिचार, खुशामद जैसे दीनता सूचक अपराधों को करना पड़ता है। मोह-ममता, भय-आशंका, चिंता-कातरता, शोक-पश्चात्ताप, निराशा-कुढ़न सरीखे मनोविकार उसे घेरे रहते हैं। आत्मज्ञान एवं आत्मसम्मान को प्राप्त करना और उनकी रक्षा करने के लिए मनुष्योचित मार्ग अपनाना, यह जीवन का सतोगुणी स्वाभाविक क्रम है। यह शृंखला जब विशृंखलित हो जाती है, आत्मिक संतुलन बिगड़ जाता है, तो पाप करने का सिलसिला चल पड़ता है।

मानसिक संतुलन और समत्व की भावना

मानसिक संतुलन को हम गीता में बतलाई समत्व [illegible] भी कह सकते हैं। सब सांसारिक पदार्थों में प्रवृत्ति की हम [illegible] व्यक्ति

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

होती है, उतनी ही जब उनसे निवृत्त होने की भी शक्ति होती है, तो उस अवस्था को संतुलित और समत्व भावना की अवस्था कह सकते हैं।

इस समत्व को आचरण में उतारने के लिए केवल विरागी अथवा रागहीन होने से ही कार्य न चलेगा। संतुलित अवस्था तो तब होगी, जब आप रागहीन होने के साथ-साथ द्वेषहीन भी होंगे। हमारे भारतीय साधुओं ने भी वही भूल की। वे होने के लिए तो विरागी हो गए, पर साथ-साथ अद्वेषी (अद्वेष्टा) न हुए। राग से बचने की धुन में उन्होंने द्वेष को अपना लिया। संसार के सुख-दुःख से संबद्ध न होने की चाह में उन्होंने संसार से अपना संबंध विच्छेद कर लिया और उसकी सेवाओं से अपना मुख मोड़ लिया।

जब दो गुण ऐसे होते हैं जो मनुष्य को परस्पर विपरीत दिशाओं में प्रवृत्त करते हैं, तो उनके पारस्परिक संयोग से चित्त की जो अवस्था होती है, उसे ही संतुलित अवस्था कहते हैं। दया मनुष्य को दूसरों का दुःख दूर करने में प्रवृत्त कराती है, पर निर्मोह या निर्ममत्व मनुष्य को दूसरों के सुख-दुःख से संबंधित होने से पीछे हटाता है। अतएव दया और निर्ममत्व दोनों के एक बराबर होने से चित्त संतुलित होता है। जहाँ दया मनुष्य को अनुरक्त करती है, वहाँ निर्ममता विरक्त। दया में प्रवृत्तात्मक और निर्ममता में निवृत्तात्मक शक्ति है। उसी तरह संतोष और परिश्रमशीलता एकदूसरे को संतुलित करते हैं। परिश्रमशीलता में प्रवृत्तात्मक और संतोष में निवृत्तात्मक शक्ति है। उसी तरह सत्यता और मृदुभाषिता, सरलता और दृढ़ता, विनय और निर्भीकता, नम्रता और तेज, सेवा और अनासक्ति, शुचिता और घृणाहीनता, स्वतंत्रता और उत्तरदायित्व, तितिक्षा और आत्मरक्षा, निष्कामता और आलस्यहीनता, अपरिग्रह और द्रव्योपार्जन शक्ति परस्पर एकदूसरे को संतुलित करते हैं। इन युग्मों में से यदि केवल एक का ही विकास हो और दूसरे के विकास की ओर ध्यान न दिया जाए तो मनुष्य का व्यक्तित्व असंतुलित एवं एकांगी हो जाएगा। श्रद्धालु व्यक्ति में श्रद्धेय व्यक्ति का अनुगमन करने तथा उसके द्वारा निर्दिष्ट मार्ग पर चलने की प्रवृत्ति होती है, स्वतंत्रता प्राप्त व्यक्ति पर अंकुश न होने से उसमें निरंकुशता और उच्छृंखलता बढ़ सकती है, दृढ़ प्रकृति व्यक्ति में हठ करने की प्रवृत्ति हो सकती है, प्रभुत्वशाली व्यक्ति में अभिमान बढ़ सकता है, इत्यादि।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अतएव जब तक इन व्यक्तियों में क्रमशः आत्मनिर्भरता, उत्तरदायित्व, हठहीनता और निरभिमानता का विकास न होगा, तब तक पूर्वोक्त गुण अपनी-अपनी सीमा के भीतर न रहेंगे। अतएव उपरोक्त युग्मों में से प्रत्येक गुण एकदूसरे को मर्यादित करता है और एकदूसरे का पूरक है।

जब मनुष्य में दंड देने की सामर्थ्य रहते हुए भी अपमान सहन करने की क्षमता होती है, जब वह अहिंसा व्रत पालते हुए भी अपराधियों को अधिकाधिक उच्छृंखल, उद्धत, अभिमानी और निष्ठुर नहीं बनने देता, जब वह सेवाव्रती होते हुए भी सेव्यजनों को आलसी, परमुखापेक्षी और अकर्मण्य नहीं होने देता, जब वह क्रोध में होते हुए भी अनुशासन और नियंत्रण बनाए रखना जानता है, जब उसमें भक्ति और उत्साह होते हुए भी दासवृत्ति और उतावलापन नहीं होता, जब वह सफलता में विश्वास रखते हुए भी कार्य करने में लापरवाही नहीं करता, जब वह त्यागी होते हुए भी विपक्षी का लोभ नहीं बढ़ाता, जब वह मान-सम्मान की परवाह न करते हुए भी लोक-कल्याण करने वाले शुभ कार्यों के करने में पूर्ण उत्साही होता है, जब वह अपमान से दुखी न होते हुए भी अपमानजनक कार्य न करने का संयमी एवं आत्मनिग्रही होता है, जब वह शुभ कर्मों को करने के लिए बाध्य न होते हुए भी स्वेच्छा से उन्हें तत्परतापूर्वक अच्छी तरह करता है, जब वह किसी कार्य में प्रवृत्त होने के साथ-साथ उससे निवृत्त भी हो सकता है, तब उसके चरित्र और गुणावलियों में संतुलन आता है।

जब दो विचारधाराएँ मनुष्य से भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में कार्य कराती हैं, तब उनके समन्वय से जो स्थिति होती है, उसे संतुलित विचारधारा कहते हैं। आत्मसुख की भावना बहुधा मनुष्य को स्वार्थमय कर्मों में प्रवृत्त कराती है और लोकसुख की भावना लोक-कल्याण के कार्यों में। अतएव आत्मसुख और लोकसुख दो विभिन्न दृष्टिकोण हुए। इनके समन्वय से जो स्थिति होती है, वही संतुलित विचारपद्धति है। उसी प्रकार जिसकी विचारधारा में पूर्व और पश्चिम के आदर्शों का समन्वय, भौतकवाद और अध्यात्मवाद का समन्वय, आदर्श और यथार्थ का समन्वय हुआ है और जो मध्यम मार्ग को अपनाए हुए है, उसी की विचारधारा संतुलित है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

जब हम किसी एक ही कार्य के पीछे पड़ जाते हैं अथवा हम जब किसी कार्य में अति करने के कारण दूसरे करणीय कार्यों को भूल जाते हैं, तब हमारी कार्यपद्धति असंतुलित होती है। यदि हम एकदम धन कमाने के पीछे पड़ जाएँ अथवा यदि हम केवल पढ़ने में ही सारा समय बिताने लगें तो हमारी कार्यपद्धति असंतुलित होगी। यदि कोई विद्यार्थी अपने हस्तलेखन की केवल गति ही बढ़ाने पर ध्यान दे और अक्षरों की सुंदरता पर ध्यान न दे तो आप उसके प्रयत्न को क्या कहेंगे? उसी प्रकार यदि किसी देश में ऐसा कोई आयोजन हो कि केवल शिक्षा की क्वालिटी या उसकी उत्कृष्टता ही एकमात्र लक्ष्य हो और इस बात का ध्यान न हो कि शिक्षा अधिक से अधिक संख्या में लोगों को उपलब्ध हो सके तो उस देश के शिक्षाशास्त्रियों की कार्यपद्धति असंतुलित ही कही जाएगी। यही बात मानव जीवन पर भी घटित होती है। हमें केवल एक ही दिशा में घुड़दौड़ नहीं मचानी चाहिए, वरन सब दिशाओं में विकास करते हुए मानसिक संतुलन को बनाए रखना चाहिए। तभी हम अगाध मानसिक शांति के दर्शन कर सकेंगे।

'अति सर्वत्र वर्जयेत'

हमारे प्राचीन शास्त्रकारों तथा नीतिकारों ने जगह-जगह इस बात पर जोर दिया है कि किसी भी काम में 'अति' नहीं करनी चाहिए। यह नियम बुरी बातों पर ही नहीं अनेक अच्छी बातों पर भी लागू होता है। जैसे कहा गया है कि अति दानवृत्ति के कारण बलि को पाताल में बँधना पड़ा। संभव है कि कुछ विशिष्ट आत्माओं के लिए जो किसी असाधारण उद्देश्य की पूर्ति के लिए पृथ्वी पर अवतीर्ण होती हैं, यह नियम आवश्यक न माना जाए, पर सर्वसाधारण के लिए सदैव मध्यम मार्ग-संतुलित जीवन का नियम ही उचित सिद्ध होता है।

भगवान बुद्ध ने 'मज्झम मग्ग' का, मध्यम मार्ग का, आचरण करने के लिए सर्वसाधारण को उपदेश किया है। बहुत तेज दौड़ने वाले जल्दी थक जाते हैं और बहुत धीरे-धीरे चलने वाले अभीष्ट लक्ष्य तक पहुँचने में पिछड़ जाते हैं। जो मध्यम गति से चलता है, वह बिना थके, बिना पिछड़े उचित समय पर अपने गंतव्य स्थान तक पहुँच जाता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

पानी में डूब सकता है, किसी दल-दल में फँस सकता है, या किसी गड्ढे में औंधे मुँह पटक खाकर प्राण गँवा सकता है । साथ ही यदि वह कदम बढ़ाने का कार्य न करे, पानी की विस्तृत धारा को देख कर डर जाय तो नदी पार नहीं कर सकता । हाथी बुद्धिमान प्राणी है । वह अपने भारी भरकम डीलडौल का ध्यान रखता है, नदी पार करने की आवश्यकता अनुभव करता है, पानी के विस्तृत फैलाव को समझता है । इन सब बातों का ध्यान रखते हुए वह अपना कार्य गंभीरता पूर्वक आरम्भ करता है । जहाँ खतरा दीखता है वहाँ से पैर पीछे हटा लेता है और फिर दूसरी जगह होकर रास्ता ढूँढ़ता है । इस प्रकार वह अपना कार्य पूरा कर लेता है ।

मनुष्य को भी हाथी की सी बुद्धिमानी सीखनी चाहिए और अपने कार्यों को मध्यम गति से पूरा करना चाहिए । विद्यार्थी कितनी ही उतावली करे एक दो महीने में अपनी शिक्षा पूरी कर नहीं सकता, कर भी लेगा तो उसे जल्दी भूल जायगा । क्रम-क्रम से नियतकाल में पूरी हुई शिक्षा ही मस्तिष्क में सुस्थिर रहती है । पेड़, पौधे, वृक्ष, पशु-पक्षी सभी अपनी नियत अवधि में परिपक्व फल देने लायक तथा वृद्ध होते हैं यदि उस नियति गति विधि में जल्दबाजी की जाय तो परिणाम बुरा होता है । हमें अपनी शक्ति, सामर्थ्य, योग्यता, मनोभूमि, परिस्थिति आदि को यान में रखकर निर्धारित कार्यों को पूरा करना चाहिए ।

बहुत खाना, भूख से ज्यादा खाना बुरा है- इसी प्रकार बिल्कुल न खाना-भूखे रहना बुरा है । अति का भोग बुरा है पर अमर्यादित तप भी बुरा है । अधिक विषयी क्षीण हो कर असमय में ही मर जाते हैं, पर जो अमर्यादित अतिशय तप करते हैं, शरीर को अत्यधिक कस डालते हैं वे भी दीर्घ जीवी नहीं होते । अति का कंजूस होना ठीक नहीं, पर इतना दानी होना भी किस काम का कि कल खुद को ही दाने-दाने का मुँहताज बनना पड़े । आलस्य में पड़े रहना हानि कारक है पर सामर्थ्य से अधिक श्रम करते रह कर जीवनी शक्ति को समाप्त कर डालना भी लाभदायक नहीं । कुबेर बनने की तृष्णा में पागल बन जाना या कंगाली में दिन काटना दोनो ही स्थितियाँ अवांछनीय हैं ।

नित्य मिठाई ही खाने को मिले तो उससे अरुचि के साथ-साथ दस्त भी शुरू हो जायेंगे । भोजन में मीठे की मात्रा बिल्कुल न हो तो चमडी पीली पड़ जायगी । बहुत घी खाने से मन्दाग्नि हो जाती है पर यदि

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

बिल्कुल घी न मिले तो खून खराब हो जायेगा । बिल्कुल कपड़े न हों तो सर्दी में निमोनियां हो जाने का और गर्मी में लू लग जाने का खतरा है, पर जो कपड़ों के परतों से बेतरह लिपटे रहते हैं उनका शरीर आम की तरह पीला पड़ जाता है । बिल्कुल न पढ़ने से मस्तिष्क का विकास नहीं होता पर दिन रात पढ़ने की धुन में व्यस्त रहने से दिमाग खराब हो जाता है आँखें कमजोर पड़ जाती हैं ।

घोर, कट्टर, असहिष्णु, सिद्धाँतवादी बनने से काम नहीं चलता । दूसरों की भावनाओं का भी आदर करके सहिष्णुता का परिचय देना पड़ता है । अन्ध भक्त बनना या अविश्वासी होना दोनों ही बातें बुरी हैं । विवेक पूर्वक हंस की भांति नीर क्षीर का अन्वेषण करते हुए ग्राह्य और अग्राह्य को प्रथक करना ही बुद्धि मानी है । देश काल और पात्र के भेद से नीति व्यवहार और क्रिया पद्धति में भेद करना पड़ता है । यदि न करें तो हम अतिवादी कहे जायेंगे । अतिवादी–आदर्श तो उपस्थित कर सकते हैं, पर नेतृत्व नहीं कर सकते ।

आदर्शवाद हमारा लक्ष्य होना चाहिए, हमारी प्रगति उसी ओर होनी चाहिए, पर सावधान ! कहीं अपरिपक्व अवस्था में ऐसी बड़ी छलांग न लगाई जाय, जिसके परिणाम स्वरूप टांग टूटने की यातना सहनी पड़े । कड़े कार्यों को पूरा करने के लिए मजबूत व्यक्तित्व की आवश्यकता है । मजबूत व्यक्तित्व धैर्यवानों का होता है । उतावली करने वाले छछोरे या रेंगने वाले आलसी नहीं, महत्वपूर्ण सफलतायें वे प्राप्त करते हैं जो धैर्यवान होते हैं, जो विवेक पूर्वक मजबूत कदम उठाते हैं और जो अतिवाद के आवेश से बचकर मध्यम मार्ग पर चलने की नीति को अपनाते हैं । नियमितता, दृढ़ता, एवं स्थिरता के साथ समगति से कार्य करते रहने वाले व्यक्तियों के द्वारा ही उपयोगी संतुलित कार्यों का सम्पादन होता है ।

एकांगी विकास की हानियाँ

मानसिक असंतुलन से मनुष्य के व्यक्तित्व का एकांगी विकास होता है । हममें से प्रत्येक व्यक्ति मानसिक रूप से नई परिस्थितियों में फिट होने का प्रयत्न करता रहता है । यदि हम अपने घर, पेशे, वातावरण के अनुसार अपने मानसिक संस्थान को ढक लेते हैं तो हमें कार्य में प्रसन्नता और मन में शान्ति प्राप्त होती है । अन्यथा हमारा मन अतृप्त और हमारी आत्मा अशान्त रहती है ।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

उदाहरण स्वरूप कुछ ऐसे विचार और तथ्य होते हैं जिनके प्रति हम ईर्ष्यालु हो उठते हैं । हम इन विचारों से बच नहीं सकते । उनके बावजूद हमें इन्हीं विरोधी विचारों में कार्य करना है, उनसे मित्रता करनी है । तभी हमें मानसिक शान्ति प्राप्त हो उठेगी ।

मन में आन्तरिक संघर्ष का क्या कारण है ? दो विरोधी विचार, दो विभिन्न दृष्टिकोण हमारे मानसिक क्षितिज पर उदित होते हैं । हमें इन दोंनो के बाबजूद कार्य करना है । संतुलन ही शान्ति का एक मात्र उपाय है ।

चोरी करने वाला व्यक्ति वह है जो अपने विचार, भावना और अन्तरात्मा में पारस्परिक संतुलन नहीं कर पाता । उसकी लालच और मोह की प्रवृत्ति अन्तरात्मा को दबा देती है । वह मोह को लम्बा छोड़ देता है और स्वयं भी उसमें लिपट जाता है । सत्य और न्याय की पुकार दब जाती है । पापमयी वृत्ति की विजय होती है । शैतान बच्चे, झगड़ालू औरतें, सब इस मानसिक रोग के शिकार होते हैं । वे मानसिक जगत को ठीक तरीके से संचालित और संतुलित नहीं कर पाते हैं । कोई विकार इतना तीव्र हो जाता है, जो विवेक बुद्धि को दबाकर उनके स्वभाव का एक अंग बन जाता है ।

मन की क्रियाओं को तीन भागों में विभाजित किया जाता है, १–भावना, २–विचार, ३–क्रियायें । ऐसे बहुत कम व्यक्ति हैं, जिनमें उपरोक्त तीनों क्रियाओं का पूर्ण सामन्जस्य या पूर्ण संतुलन हो । किसी में भावना का अंश अधिक है तो वह भावुकता से भरा है, आवेशों का विचार रहता है । उसकी कमजोरी–अति संवेदन शीलता है । वह जरा सी भावना को तिल का ताड़ बनाकर देखता है ।

विचार प्रधान व्यक्ति दर्शन की गूढ़ गुत्थियों में ही डूबते उतराते रहते हैं । नाना कल्पनाऐं उनके मानस क्षितिज पर उदित अस्त होती रहतीं हैं । योजना बनाने का कार्य उनसे खूब करा लीजिए । पर असली काम के नाम वे शून्य हैं ।

तीसरे प्रकार के व्यक्ति सोचते कम हैं, भावना में नहीं बहते हैं पर काम खूब करते रहते हैं । इन कार्यों में ऐसे भी काम वे कर डालते हैं जिनकी आवश्यकता नहीं होती तथा जिनके बिना भी उनका काम चल

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

सकता है ।

पूर्ण संतुलित वही व्यक्ति है जिसमें भावना, विचार तथा कार्य, इन तीनों ही तत्वों का पूर्ण सामंजस्य या मेल हो । ऐसा व्यक्ति मानसिक दृष्टि से पूर्ण स्वस्थ है ।

हमें चाहिए कि हम 'अति' से अपनी रक्षा करें और इस प्रकार असंतुलन से बचे रहें । कहने का तात्पर्य यह है कि अति भावुकता के चक्र में पड़ कर ऐसा न कर डालें, ऐसे वायदे न कर बैठें जिन्हें बाद में पूर्ण न कर सकें । इतने विचार-प्रधान न बन जायें कि सम्पूर्ण समय सोचते विचारते, चिन्तन करते-करते ही व्यतीत हो जाय । विचार करना उचित है किन्तु विचारों ही में निरन्तर डूबे रहना और कार्य न करना हमें मानसिक रूप से आलसी बना डालेगा ।

अच्छे व्यक्ति के निर्माण में क्रिया, भावना, तथा विचार शक्ति इन तीनों आवश्यक तत्वों का पूर्ण विकास होना चाहिए । जो व्यक्ति काम, क्रोध, आवेश, उद्वेग इत्यादि में निरत रहते हैं, उन्हें भावनाजन्य मानसिक व्याधियों का परित्याग करना चाहिए । जो केवल कागजी योजना से और व्योम-विहारिणी कल्पनाओं में लगे रहते हैं , इन्हें सांसारिक दृष्टिकोण से अपनी योजनाओं की सत्यता जांचनी चाहिए । इन दोनों प्रकार के व्यक्तियों को अपने कार्यों को जीवन में प्रकट करना चाहिए । हम महान पुरुषों में देखते हैं कि उनकी बुद्धि पूर्ण विकास को पहुँच चुकी थी, विचार और इच्छा शक्ति बड़ी बलवती थी और कार्य शक्ति उच्चकोटि की थी । महात्मा गांधी ऐसे संतुलित व्यक्तित्व के उदाहरण थे ।

जीवन में संतुलन का महत्व

एक ऐसे व्यक्ति की कल्पना कीजिए जो हवा के भयंकर तूफान में चला जा रहा है । धूल से उसके नेत्र क्षण भर के लिए बन्द हो जाते हैं । अधिमिचे नेत्रों से वह दूसरी ओर बहक जाता है । ठीक मार्ग पर आरूढ़ होना चाहता है किन्तु मार्ग नहीं सूझता ।

यही हाल मानव के अन्तर्जगत का है । वह अन्दर ही अन्दर अनेक विरुद्ध भावनाओं का शिकार रहता है । प्रलोभन का मायाजाल और वासना की आंधी उसे घेरे रहती है और वासना तृप्ति के लिए वह इधर

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

उधर भटकता रहता है । उसे पथ भ्रष्ट होते देख उसकी शुभ शक्तियां उसे सचेत करती हैं । यदि उनकी शक्ति अधिक हो तो व्यक्ति बच जाता है , अन्यथा पतन के गर्त में विलीन हो जाता है ।

मानव जीवन में अनेक आन्तिरिक एवं बाह्य शक्तियों का प्राधान्य है । भावना कहती है–:

"अमुक व्यक्ति बड़ी दयनीय स्थिति में है । उसकी सहायता करें, अपने सुख सुविधा, साधनों को न देखें । कर्ण, शिवि, राजा हरिश्चन्द्र का उदाहरण लीजिए । इन महापुरुषों ने दया, करुणा, सहानुभूति और दान द्वारा महान पद प्राप्त किया । हमें भी यही करना चाहिए । अपने सुख सुविधा इत्यादि का कोई ध्यान न रखना चाहिए ।"

तर्क आपको रोकता है और कहता है –"क्या पागल हुए हो, सोचो विचारो, दिमाग से काम लो । यदि साधनों का ध्यान छोड़कर व्यय किया, दूसरों से बड़े बड़े बायदे किए तो आफत में फँस जाओगे । भावना में मत बहो । समाज रूपये का आदर करता है।"

विलास भावनाऐं कहती हैं–"अरे मानव तूने बहुत श्रम कर लिया है । अब कुछ आनन्द मना ले । जीवन का रस ले । बार बार जीवन आने वाला नहीं है ।"

इस प्रकार मानव के आन्तरिक जीवन में भावना, तर्क, वासना, शरीर बल, आत्म बल, प्रेम, द्वेष, घृणा इत्यादि परस्पर विरुद्ध शक्तियों का अविराम ताण्डव चलता रहता है । जो इन शक्तियों का उचित समन्वय कर सकता है वही सफल है ।

जीवन में भावना की आवश्यकता है बिना भावना का मनुष्य मिट्टी या पत्थर का पुतला मात्र बन जाता है । तर्क अर्थात् विवेक की आवश्यकता भी है । जो सोच समझ कर कार्य न करे, बुद्धि से काम न ले, वहतो निराट पशु ही है । इसी प्रकार वासना, घृणा, प्रेम इत्यादि सबका अपने अपने स्थान पर महत्व है । पर सुख और सफलता मानव की विभन्न शक्तियों के संतुलन में ही है । असंतुलन में पराजय छिपी हुई है ।

सिकन्दर महान, जूलियस सीजर और औरंगजेब की अत्यंत बड़ी महत्वाकांक्षाओं का परिणाम हमारे सामने है । कर्ण के पतन का कारण

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अति भावुकता थी, रावण दर्प के कारण मृत्यु को प्राप्त हुआ ।

तर्कशील, भावनाशील, कर्मशील–तीनों ही प्रकार के मानव जीवन में अमर्यादित संतुलन से असफल हो सकते हैं । इसलिए यह ध्यान रखें कि कहीं आपके व्यक्तित्व का एक ही पहलू विकसित न होता रहे । सभी संतुलित रूप में विकसित होते रहें । अतिरेक त्याज्य है । ध्येय और व्यवहार, कर्म और भावना, परिश्रम और विश्राम, तर्क और कार्य इन सभी द्वन्दों में उचित समन्वय का नाम ही जीवन है ।

उत्तेजना के दुष्परिणाम

कहते हैं आदिम जाति में एक बहुत बड़ी मानसिक कमजोरी रहती है, जिसे उत्तेजना कहा जाता है । आदिम जातियों में नृशंस हत्याओं और मारपीटों का विशेष कारण यही उत्तेजना होता है । लड़का यदि अपने पिता से क्रुद्ध और उत्तेजित हो उठा तो एक ही आवेश में वह पिता की हत्या कर बैठता है । यही स्थिति पिता अथवा अन्य कुटुम्बियों की है । क्रोध पर ये काबू कर नहीं पाते और क्षणिक आवेश में हत्या, मार पीट, खून खराबी हो जाती है । छोटी–छोटी बातों पर लड़ाई झगड़े चलते रहते हैं । पारस्परिक कटुता की अभिवृद्धि होती रहती है । एक दूसरे के प्रति बैर, ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध, घृणा इत्यादि विषैले मनोविकार पनपते रहते हैं ।

उत्तेजना क्या है ? इसका विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि यह उद्वेग का आधिक्य है । साधारणतः व्यक्ति दो प्रकार के होते हैं । एक तो वे जिन्हें 'मोटी चमड़ी' का कह सकते हैं । इन व्यक्तियों में भावनायें कम होतीं हैं । इन्हें कुछ कह दीजिए इनके मन में कोई प्रभाव न पड़ेगा । गाली गलौज या मान हानि से भी वे उत्तेजित न होंगे । ये भावना के आक्रोश में नहीं रहते । क्रोध, घृणा, ईर्ष्या क्षणिक आवेश का इन पर कोई शीघ्रव्यापी प्रभाव नहीं होता ।

दूसरे व्यक्ति भावुक और अति उद्विग्न होते हैं मक्खन की तरह कोमल, छुई मुई के पौधे के समान संवेदनशील, भावना की अधिकता इनकी दुर्बलता है । भावना अर्थात् क्रोध, प्रेम, वात्सल्य, दया, ईर्ष्या इत्यादि मनोविकारों को अत्यधिक गहराई से अनुभव करना और उन्हीं

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

के वश में इतना हो जाना कि स्वयं अपनी विवेक बुद्धि को भी खो डालना । लाभ हानि या अन्तिम परिणाम का ख्याल न रखना इनकी कमजोरी है । जो गुण एक कवि में सौभाग्य का विषय है, वही मनोविकारों के ऊपर नियन्त्रण न कर सकने वाले व्यक्ति के लिए एक अभिशाप है । ये अपनी उत्तेजनाओं के ऊपर विवेक बुद्धि का नियन्त्रण नहीं कर पाते और स्वयं उनके वशीभूत हो जाते हैं ।

उत्तेजना एक क्षणिक पागलपन है । यह भावना का ताण्डव नृत्य है, उद्वेग एक आंधी है, ईर्ष्या, क्रोध, प्रतिशोध का एक भयंकर तूफान है, जिसे निर्बल इच्छा शक्ति वाला व्यक्ति संभाल नहीं पाता अपने आपे को खो देता है ।

उत्तेजना की आंधी में बुद्धि विवेक शून्य तथा निश्चेष्ट हो जाती है, यह उत्तरोत्तर बढ़ कर शरीर पर पूरा अधिकार कर लेती है । भावना के उद्वेग में नीर-क्षीर, विवेक का ज्ञान लुप्त हो जाता है । उत्तेजक स्वभाव वाला व्यक्ति दूरदर्शिता को खो बैठता है । कभी-कभी उसे अपनी शक्तियों का ज्ञान तक नहीं रहता । कमजोर व्यक्ति भी उत्तेजना का शिकार हो कर मजबूत व्यक्ति से लड़ बैठते हैं । बातों बातों में उग्र हो जाते हैं । हाथा पाई की नौबत आ जाती है । जिससे व्यर्थ की हानि उठानी पड़ती है ।

संतुलित जीवन की विघातक प्रवृत्तियाँ

संतुलित जीवन के शत्रु हमारे आन्तरिक मनोविकार ही होते हैं । ये शत्रु हमारे मन के विभिन्न स्तरों में निवास करते हैं । और प्रत्येक व्यक्ति में थोड़ी बहुत मात्रा में विद्यमान रहते हैं । जो मनुष्य इनसे जितने अंशों में मुक्ति पा जाता है, वह उतना ही सभ्य और सुसंस्कृत समझा जा सकता है । इसलिए मनुष्य का कर्तव्य है कि इन शत्रुओं-मन की कुप्रवृत्तियों को जहाँ तक संभव हो नियंत्रण में रखें ।

ये शत्रु हैं काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, घृणा, द्वेष । इन दुर्गुणों को स्वच्छन्दता देने से मानसिक विष सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त हो जाता है, बुद्धि में तमोगुण का प्राचुर्य होता है । और मनुष्य भ्रम वश सत् असत् का विवेक नहीं कर पाता । इन शत्रुओं में कोई एक भी यदि बढ़ जाय तो सर्वनाश करने में पूर्ण समर्थ है । ये मानसिक विष यदि वहिर्गत न किये

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

गये तो आयु पर्यन्त मनुष्य के साथ रहेंगे, सदा उसे आन्तरिक ज्वाला में दग्ध करते रहेंगे, और न जाने कितनी बार जन्म मरण की मार्मिक पीड़ा देंगे । मनुष्य की नाना प्रवृत्तियों के नीचे ये विकार पाये जाते हैं । ये मानसिक विष प्रायः दुर्भावनाओं की जटिल मानसिक ग्रंथियाँ बन जाते हैं, मस्तिष्क में संघर्ष उत्पन्न कर देते हैं और अनेक जटिल व्याधियों के रूप में प्रगट होते हैं ।

प्रायः इन मानसिक शत्रुओं से ग्रसित व्यक्ति को यह ज्ञान नहीं रहता कि वह उनके पंजे में है या नहीं । क्रोधी स्वयं नहीं जानता कि वह ईर्ष्या की मिट्टी में जल रहा है, कभी नहीं समझता कि वीर्य नाश द्वारा वह अपने स्वास्थ्य आयु और शरीर को जर–जर बना रहा है । कंजूस माया के मोह में फँस कर विवेक बुद्धि को शून्य बना लेता है । कभी–कभी तमो गुण के अधिकार में रहने के कारण मनुष्य इन दुर्गुणों में ही सुख और संतोष की भावना करने लगता है । मनुष्य भ्रम वश व्यक्ति से, समाज से, जाति और राष्ट्र से, असूया, घृणा करने में अपनी प्रतिष्ठा की गणना होते देखता है । कामनाओं के पोषण करने का नाम प्रगति रखता है । अन्दर बसी हुई क्रोध की वृत्ति को तेज मानने लगता है, मान का नाम आत्म सम्मान रखकर उसकी रक्षा करना अपना कर्तव्य समझने लगता है । लोभ को अपनी उन्नति का साधन समझता है, मोह का नाम प्रेम रखकर जीवन को बर्बाद कर देना आदर्श मानता है । इसलिए ये दुर्गुण ऐसे मनुष्यों में बढ़ते चले जाते हैं ।

इन मानसिक शत्रुओं की पारस्परिक घनिष्ठता है, एक के आने पर दूसरा स्वयं आता है । एक दूसरे के लिए मैदान तैयार करता है । मोह से ईर्ष्या और डाह उत्पन्न होते हैं । द्वेष से बैर की सृष्टि होती है , क्रोध मद और अभिमान उत्पन्न करता है । घृणा से द्वेष का दुर्भाव पैदा होता है । इन मनोविकारों का द्वन्द नाना विषयों के अनुसार अनेक रूपों में प्रकट होता है । विचार की मूल अनुभूति ही विषय भेद के अनुसार क्रोध, भय, घृणा, मद, लोभ, मोह, मात्सर्य आदि मनोविकारों का जटिल रूप धारण करती है ।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

क्रोध पतन की ओर ढकेलता है

क्रोध का संबंध मन के अन्य विकारों से घनिष्ठ है। क्रोध के वशीभूत होकर हमें उचित-अनुचित का विवेक नहीं रहता और हम हाथापाई कर बैठते हैं। बातों-बातों ही में उखड़ पड़ना, लड़ाई-झगड़ा करना साधारण सी बात है। यदि तुरंत क्रोध का प्रकाशन हो जाए, तब तो मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से ठीक है, पर यदि वह अंत:प्रदेश में पहुँचकर एक भावना ग्रंथि बन जाए तो बड़ी दु:खदायी होती है। बहुत दिनों तक टिका हुआ क्रोध बैर कहलाता है। बैर एक ऐसी मानसिक बीमारी है, जिसका कुफल मनुष्य को दैनिक जीवन में भुगतना पड़ता है। वह अपने आप को संतुलित नहीं रख पाता, जिससे उसे बैर है, उसके उत्तम गुण, भलाई, पुराना प्रेम, उच्च संस्कार आदि सब विस्मृत कर बैठता है। स्थाई रूप से एक भावना ग्रंथि बन जाने से क्रोध का वेग तो धीमा पड़ जाता है, किंतु दूसरे व्यक्ति को सजा देने, नुकसान पहुँचाने या पीड़ित करने की कुत्सित भावना निरंतर मन को दग्ध किया करती है।

बैर पुरानी जीर्ण मानसिक बीमारी है, क्रोध तात्कालिक और क्षणिक प्रमाद है। क्रोध में पागल होकर हम सोचने का समय नहीं देखते बैर उसके लिए बहुत समय लेता है। क्रोध में अस्थिरता, क्षणिकता, तत्कालीनता, बुद्धि का कुंठित हो जाना, उद्विग्नता, आत्मरक्षा, अहंकार की पुष्टि, असहिष्णुता, दूसरे को दंडित करने की भावनाएँ संयुक्त हैं।

क्रोध मन को एक उत्तेजित और खिंची हुई स्थिति में रख देता है, जिसके परिणामस्वरूप मन दूषित विकारों से भर जाता है। क्रोध से प्रथम तो उद्वेग उत्पन्न होता है। मन एक गुप्त किंतु तीव्र पीड़ा से दग्ध होने लगता है। रक्त में गरमी आ जाती है और उसका प्रवाह बड़ा तेज हो जाता है। इस गरमी में मनुष्य के शुभ भाव, दया, प्रेम, सत्य, न्याय, विवेक, बुद्धि जल जाते हैं।

क्रोध एक प्रकार का भूत है, जिसके सवार होते ही मनुष्य आपे में नहीं रहता। उस पर किसी दूसरी सत्ता का प्रभाव हो जाता है। मन की निंद्य वृत्तियाँ उस पर अपनी राक्षसी माया चढ़ा देती हैं, वह बेचारा इतना हतबुद्धि हो जाता है कि उसे यह ज्ञान नहीं रहता कि वह क्या कर रहा है?

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

आधुनिक मनुष्य का आंतरिक जीवन और मानसिक अवस्था अत्यंत विक्षुब्ध है, दूसरों में वह अनिष्ट देखता है, उससे हानि होने की कुकल्पना में डूबा रहता है। जीवनपर्यंत इधर-उधर लुढ़कता, ठुकराया जाता रहता है, शोक, दुःख, चिंता, अविश्वास, उद्वेग, व्याकुलता आदि विकारों के वशीभूत होता रहता है। ये क्रोधजन्य मनोविकार अपना विष फैलाकर मनुष्य का जीवन विषैला बना रहे हैं। उसकी आध्यात्मिक शक्तियों का शोषण कर रहे हैं। साधना का सबसे बड़ा विघ्न क्रोध नाम का राक्षस ही है।

क्रोध शांति भंग करने वाला मनोविकार है। एक बार क्रोध आते ही मन की अवस्था विचलित हो उठती है। श्वासोच्छ्वास तीव्र हो उठता है, हृदय विक्षुब्ध हो उठता है। यह अवस्था आत्मिक विकास के विपरीत है। आत्मिक उन्नति के लिए शांति, प्रसन्नता, प्रेम और सद्भाव चाहिए।

जो व्यक्ति क्रोध के वश में है, वह एक ऐसे दैत्य के वश में है जो न जाने कब मनुष्य को पतन के मार्ग में धकेल दे। क्रोध तथा आवेश के विचार आत्मबल का ह्रास करते हैं।

ईर्ष्या की आंतरिक अग्नि

ईर्ष्या वह आंतरिक अग्नि है जो अंदर ही अंदर दूसरे की उन्नति या बढ़ती प्रगति देखकर हमें भस्मीभूत किया करती है। दूसरे की भलाई या सुख देखकर मन में जो एक प्रकार की पीड़ा का प्रादुर्भाव होता है, उसे ईर्ष्या कहते हैं।

ईर्ष्या एक संकर मनोविकार है, जिसकी संप्राप्ति आलस्य, अभिमान और नैराश्य के संयोग या जोड़ से होती है। अपने आप को दूसरे से ऊँचा मानने की भावना अर्थात मनुष्य का 'अहं' इसके साथ संयुक्त होता है।

ईर्ष्या मनुष्य की हीनत्व भावना से संयुक्त है। अपनी हीनत्व भावना ग्रंथि के कारण हम किसी उद्देश्य या फल के लिए पूरा प्रयत्न तो कर नहीं पाते, उसकी उत्तेजित इच्छा करते रहते हैं। हम सोचते हैं-"क्या करें हमारे पास अमुक वस्तु या चीज होती, हाय! वह चीज तो उसके पास है, हमारे पास नहीं, वह वस्तु यदि हमारे पास नहीं है तो उसके पास भी न रहे।"

ईर्ष्या व्यक्तिगत होती है। इसमें मनुष्य दूसरे की बुराई, अपकर्ष, पतन, त्रुटि की भावनाएँ मन में लाता है। स्पर्द्धा ईर्ष्या की पहली मानसिक

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अवस्था है। स्पर्द्धा की अवस्था में किसी सुख, ऐश्वर्य, गुण या मान से किसी व्यक्ति विशेष को संपन्न देख, अपनी स्थिति पर दुःख होता है, फिर उसकी प्राप्ति की एक प्रकार की उद्वेगपूर्ण इच्छा उत्पन्न होती है। स्पर्द्धा वह वेगपूर्ण इच्छा या उत्तेजना है जो दूसरे से अपने आप को बढ़ाने में हमें प्रेरणा देती है। स्पर्द्धा बुरी भावना नहीं, यह वस्तुगत है। इसमें हमें अपनी कमजोरियों पर दुःख होता है। हम आगे बढ़कर अपनी निर्बलता को दूर करना चाहते हैं।

स्पर्द्धा व्यक्ति विशेष से होती है, ईर्ष्या उन्हीं से होती है, जिनके विषय में यह धारणा होती है कि लोगों की दृष्टि उन पर अवश्य पड़ेगी या पड़ती होगी। ईर्ष्या के संचार के लिए पात्र के अतिरिक्त समाज की भी आवश्यकता है। समाज में उच्च स्थिति–दूसरों के सम्मुख अपनी नाक ऊँची रखने के लिए ईर्ष्या का जन्म होता है। हमारे पास वह वस्तु न देखकर भी मनोविकार का संचार हो जाता है।

ईर्ष्या में क्रोध का भाव किसी न किसी प्रकार मिश्रित रहता है, ईर्ष्या के लिए कहा भी जाता है, "अमुक व्यक्ति ईर्ष्या से जल रहा है।" साहित्य में ईर्ष्या को संचारी रूप में समय-समय पर व्यक्त किया जाता है, पर क्रोध बिलकुल जड़ भाव है। जिसके प्रति हम क्रोध करते हैं, उसके मानसिक उद्देश्य पर ध्यान नहीं देते। असंपन्न ईर्ष्या वाला केवल अपने को नीचा समझे जाने से बचने के लिए आकुल रहता है। धनी व्यक्ति दूसरे को नीचा देखना चाहता है।

ईर्ष्या दूसरे की संपन्नता की इच्छा की आपूर्ति से उत्पन्न होती है या ईर्ष्या तुलनात्मक रूप से दूसरे के संपन्न होने से उत्पन्न होती है। यह अभिमान को जन्म देगी, अहंकार की अभिवृद्धि करेगी और कुढ़न का ताना–बाना बुनेगी। अहंकार से आहत होकर हम दूसरे की भलाई न देख सकेंगे। अभिमान में मनुष्य को अपनी कमजोरियाँ नहीं दीखतीं। अभिमान का कारण अपने विषय में बहुत ऊँची मान्यता धारण कर लेना है। ईर्ष्या उसी की सहगामिनी है।

ईर्ष्या द्वारा हम मन ही मन दूसरे की उन्नति देखकर मानसिक दुःख का अनुभव किया करते हैं। अमुक मनुष्य ऊँचा उठता चला जा रहा है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

हम यों ही पड़े हैं, उन्नति नहीं कर पा रहे हैं। फिर वह भी क्यों इस प्रकार उन्नति करे। उसका कुछ बुरा होना चाहिए, उसे कोई दुःख, रोग, शोक, कठिनाई अवश्य पड़नी चाहिए। उसकी बुराई हमें करनी चाहिए। यह करने से उसे अमुक प्रकार से चोट लगेगी। इस प्रकार की विचारधारा से ईर्ष्या निरंतर मन को क्षति पहुँचाती है। अशुभ विचार करने से सत्प्रवृत्तियों तथा प्राणशक्ति का क्रमशः ह्रास होने लगता है।

ईर्ष्या से उन्मत्त हो मनुष्य धर्म, नीति तथा विवेक का मार्ग त्याग देता है। उन्मादावस्था सी उसकी साधारण अवस्था हो जाती है और दूसरे लोगों की उन्माद और साधारण अवस्था उसे अपवाद के सदृश प्रतीत होती है। मस्तिष्क में नाना प्रकार की विकृत मानसिक अवस्थाओं की उत्पत्ति होती है। भय, घबराहट, भ्रम ये सब मनुष्य की ईर्ष्या और विवेकबुद्धि के अपकर्ष से उत्पन्न होते हैं।

प्रत्येक क्रिया से प्रतिक्रिया की उत्पत्ति होती है, ईर्ष्या की क्रिया से मन के वाह्य वातावरण में जो प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न होती हैं, वे विषैली होती हैं। अपनी अपवित्र भावनाएँ इर्द-गिर्द के वातावरण को दूषित कर देती हैं। वातावरण विषैला होने से सबका अपकार होता है। जो ईर्ष्या की भावनाएँ आपने दूसरों के विषय में निर्धारित की हैं, संभव है दूसरे भी प्रतिक्रिया स्वरूप वैसी ही धारणाएँ आपके लिए मन में लाएँ।

निराशा हमारी महान शत्रु है

निराशावाद उस महा भयंकर राक्षस के समान है जो मुँह फाड़े हमारे इस परम आनंदमय जीवन के सर्वनाश के चक्कर में रहता है, जो हमारी समस्त शक्तियों का ह्रास किया करता है। जो हमें आध्यात्मिक पथ पर अग्रसर नहीं होने देता और जीवन के अंधकारमय अंश हमारे सम्मुख प्रस्तुत किया करता है। हमें पग-पग पर असफलता ही असफलता दिखाता है और विजय द्वार में प्रविष्ट नहीं होने देता।

इस बीमारी से ग्रस्त लोग उदास, खिन्न मुद्रा लिए घरों के कोने में पड़े दिन-रात मक्खियाँ मारा करते हैं। ये व्यक्ति ऐसे चुंबक हैं जो उदासी के विचारों को निरंतर अपनी ओर आकर्षित करते हैं और दुर्भाग्य की कुत्सित डरपोक विचारधारा में निमग्न रहा करते हैं। उन्हें चारों ओर कष्ट

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

ही कष्ट दीखते हैं। कभी यह, कभी वह, एक न एक भयंकर विपत्ति आती हुई दृष्टिगोचर होती है। वे जब बातें करते हैं तो अपनी यंत्रणाओं, विपत्तियों के क्लेशपूर्ण अभद्र प्रसंग छेड़ा करते हैं। हर व्यक्ति से वह यही कहा करते हैं कि भाई हम क्या करें, हम बदनसीब हैं, हमारा भाग्य फूटा हुआ है, देव हमारे विपरीत हैं, हमारी किस्मत में विधि ने ठोकरों का ही विधान रखा है, तभी तो हमें थोड़ी-थोड़ी दूर पर लज्जित और परेशान होना पड़ता है। उनकी चिंतित मुद्रा देखने से यही विदित होता है, मानो उन्होंने उस भाव से गहरा संबंध स्थिर कर लिया हो, जो जीवन की सब मधुरता नष्ट कर रहा हो, उनके सोने जैसे जीवन का समस्त आनंद छीन रहा हो, उन्नति के मार्ग को कंटकाकीर्ण कर रहा हो, मानो समस्त संसार की दुःख-विपत्ति उन्हीं के सर पर आ पड़ी हो और उदासी की अंधकारमय छाया ने उनके हृदय पटल को काला बना दिया हो।

इसके विपरीत आशावाद मनुष्य के लिए अमृत तुल्य है। जैसे तृषित को शीतल जल से, रोगी को औषधि से, अंधकार को प्रकाश से, वनस्पति को सूर्य से लाभ होता है, उसी भाँति आशावाद की संजीवनी बूटी से मृतप्राय मनुष्य में जीवनीशक्ति का प्रादुर्भाव होता है। आशावाद वह दिव्य प्रकाश है जो हमारे जीवन को उत्तरोत्तर परिपुष्ट, समृद्धशाली और प्रगतिशील बनाता है। सुख-सौंदर्य एवं अलौकिक छटा से उसे विभूषित कर उसका पूर्ण विकास करता है। उसमें माधुर्य का संचार कर विघ्न-बाधा, दुःख, क्लेशों और कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करने वाली गुप्त मनःशक्ति जाग्रत करता है। आत्मा की शक्ति से देदीप्यमान आशावादी उम्मीद का पल्ला पकड़े प्रलोभनों को रौंदता हुआ अग्रसर होता है। वह पग-पग पर विचलित नहीं होता, उसे कोई पराजित नहीं कर सकता, संसार की कोई शक्ति उसे नहीं दबा सकती, क्योंकि सब शक्तियों का विकास करने वाली 'आशा' की शक्ति सदैव उसकी आत्मा को तेजोमय करती है।

संसार के कितने ही व्यक्ति अपने जीवन को उचित, श्रेष्ठ और श्रेय के मार्ग पर नहीं लगाते। वे किसी एक उद्देश्य को स्थिर नहीं करते, न वे अपने-अपने मानसिक संकल्प को इतना दृढ़ ही बनाते हैं कि निज प्रयत्नों में सफल हो सकें। सोचते कुछ और हैं। काम किसी एक पदार्थ के लिए

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

करते हैं, आशा किसी दूसरे की ही करते हैं। करील के वृक्ष बोकर आम खाने की अभिलाषा रखते हैं। हाथ में लिए हुए कार्य के विपरीत मानसिक भाव रखने से हमें अपनी निर्दिष्ट वस्तु कदापि प्राप्त नहीं हो सकती। बल्कि हम इच्छित वस्तु से और भी दूर जा पड़ते हैं। तभी तो नाकामयाबी, लाचारी, तंगी, क्षुद्रता प्राप्त होती है। अपने को भाग्यहीन समझ लेना, बेबसी की बातों को लेकर झींकना और दूसरों की इष्ट सिद्धि पर कुढ़ना हमें सफलता से दूर ले जाता है। विरोधी भाव रखने से मनुष्य उन्नत अवस्था में कदापि नहीं पहुँच सकता। संसार के साथ अविरोधी रहो, क्योंकि विरोध संसार की उत्कृष्ट वस्तुओं को अपने निकट नहीं आने देता और अविरोध उत्कृष्ट वस्तुओं का आकर्षक बिंदु है।

चिड़चिड़ापन और रूखापन

मानव स्वभाव के दुर्गुणों में चिड़चिड़ापन आंतरिक बल की दुर्बलता का सूचक है। सहिष्णुता के अभाव में मनुष्य बात-बात में बिगड़ने लगता है, नाक-भौं सिकोड़ता है। प्रायः गाली-गलौज देता है। मानसिक दुर्बलता के कारण वह समझता है कि दूसरे उसे जान-बूझकर परेशान करना चाहते हैं, उसके दुर्गुणों को देखते हैं, उसका मजाक उड़ाते हैं। किसी पुरानी अनुभूति के फलस्वरूप वह अधिक संवेदनशील हो उठता है और उसकी भावना ग्रंथियाँ उसकी गाली-गलौज या बेढंगे व्यापारों में प्रकट होती हैं।

चिड़चिड़ेपन के रोगी में चिंता तथा शक-शुबे की आदत प्रधान है। कभी-कभी शारीरिक कमजोरी के कारण कब्ज, परिश्रम से थकान, सिरदरद, नपुंसकता के कारण आदमी तिनक उठता है। अपनी कठिनाइयों तथा समस्याओं से उद्दीप्त होकर देखते-देखते उसे गहरी निराशा हो जाती है। चिड़चिड़ापन एक पेचीदा मानसिक रोग है। अतः प्रारंभ से ही इसके विषय में हमें सावधान रहना चाहिए।

जिस व्यक्ति में चिड़चिड़ेपन की आदत है, वह सदा दूसरों के दोष ढूँढ़ता रहता है। वह व्यक्ति अन्य व्यक्तियों की दृष्टि में तो बुरा होता ही है, स्वयं भी एक अव्यक्त मानसिक उद्वेग का शिकार रहता है। उसके मन में एक प्रकार का संघर्ष चला करता है। वह भ्रमित कल्पनाओं का शिकार रहता है। उसके संशय ज्ञान-तंतुओं पर तनाव डालते हैं। भ्रम बढ़ता रहता

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

है और वह मन में ईर्ष्या की अग्नि में दग्ध होता रहता है, वह क्रोधित, भ्रांत, दुखी सा नजर आता है, तनिक सी बात में उद्विग्नता का पारावार नहीं रहता। गुप्त मन पर प्रारंभ में जैसे संस्कार जम जाते हैं, उनके फलस्वरूप ऐसा ही होता है। यह आदत से बढ़ने वाला एक संस्कार है जो मनुष्य को सदैव असंतुलित बनाता रहता है।

रूखापन जीवन का सबसे बड़ा शत्रु है, कई आदमियों का स्वभाव बड़ा नीरस, रूखा, शुष्क, निष्ठुर, कठोर और अनुदार होता है। उनका आत्मीयता का दायरा बहुत ही छोटा होता है। उस दायरे से बाहर के व्यक्तियों तथा पदार्थों में उन्हें कुछ दिलचस्पी नहीं होती, किसी के हानि-लाभ, उन्नति-अवनति, खुशी-रंज, अच्छाई-बुराई से उन्हें कोई मतलब नहीं होता। अपने अत्यंत ही छोटे दायरे में स्त्री, पुत्र, तिजोरी, मोटर, मकान आदि में उन्हें थोड़ा रस जरूर मिलता है, शेष वस्तुओं के प्रति उनके मन में बहुत ही अनुदारतापूर्ण रूखाई होती है। कोई-कोई तो इतने कंजूस होते हैं कि अपने शरीर के अतिरिक्त अपनी छाया पर भी उदारता या कृपा नहीं दिखाना चाहते। ऐसे रूखे आदमी यह समझ ही नहीं सकते कि मनुष्य जीवन में कोई आनंद भी है। अपने रूखेपन के प्रत्युत्तर में दुनिया उन्हें बड़ी रूखी, नीरस, कर्कश, खुदगरज, कठोर और कुरूप मालूम पड़ती है।

रूखापन जीवन की सबसे बड़ी कुरूपता है, रूखी रोटी में क्या मजा है, रूखे बाल कैसे भद्दे लगते हैं। रूखी मशीन में बड़ी आवाज होती है, पुरजे जल्दी टूट जाते हैं, रूखे रेगिस्तान में कौन रहना पसंद करेगा। प्राणिमात्र सरसता के लिए तरस रहा है। सौभाग्य के लिए सरसता, स्निग्धता की आवश्यकता है, मनुष्य का अंत:करण रसिक है, कवि है, भावुक है, सौंदर्य उपासक है, कलाप्रिय है, प्रेममय है। मानव हृदय का यही गुण है। सहृदयता का अर्थ कोमलता, मधुरता, आर्द्रता है। जिनमें यह गुण नहीं उसे हृदयहीन कहा जाता है। हृदयहीन का अर्थ है-"जड़ पशुओं से भी नीचा।" नीरस व्यक्ति को पशुओं से भी नीचा माना गया है।

जिसने अपनी विचारधारा और भावनाओं को शुष्क, नीरस और कठोर बना रखा है, वह मानव जीवन के वास्तविक रस का आस्वादन

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

करने से वंचित ही रहेगा। उस बेचारे ने व्यर्थ ही जीवन धारण किया और व्यर्थ ही मनुष्य शरीर को कलंकित किया। आनंद का स्रोत सरसता की अनुभूतियों में है, परमात्मा को आनंदमय कहा गया है, क्यों? इसलिए कि वह सरस है, प्रेममय है। श्रुति कहती है–'रसोवैसः' अर्थात परमात्मा रसमय है। उसे प्राप्त करने के लिए अपने अंदर वैसी ही लचीली, कोमल, स्निग्ध भावनाएँ उत्पन्न करनी पड़ती हैं।

आप अपने हृदय को कोमल, द्रवित, पसीजने वाला, दयालु, प्रेमी और सरस बनाएँ। संसार के पदार्थों में जो सरसता का, सौंदर्य का अपार भंडार भरा हुआ है, उसे ढूँढ़ना और प्राप्त करना सीखिए। अपनी भावनाओं को जब आप कोमल बना लेते हैं तो आपको अपने चारों ओर अमृत झरता हुआ अनुभव होने लगता है।

जीवन को सुखी बनाने का मार्ग

उपर्युक्त विवेचन से हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि यदि हमको संसार में सुख और शांति का जीवन व्यतीत करना है तो सदैव उन मनोविकारों को नियंत्रण में रखना आवश्यक है जो हमारे मानसिक संतुलन को नष्ट करके, हमको एकांगी बनाकर, हमें पतन की ओर अग्रसर करते हैं। सुख और दुःख संसार में अवश्यंभावी हैं। इसी प्रकार किसी न किसी दृष्टि से किंचित छोटा-बड़ा होना भी प्रकृति में प्रायः देखा जाता है, पर इन बातों के कारण मन में क्रोध, ईर्ष्या, निराशा आदि का भाव उत्पन्न करना हमारा मानसिक दुर्गुण है। मनुष्य वही है जो सब प्रकार की परिस्थितियों में शांत रहकर अपने कर्त्तव्य का पालन करता चला जाता है। यदि आप इस नियम पर आचरण करेंगे तो दुःख के दिन, विपरीत घटनाएँ सहज ही निकल जाएँगे। ऐसे अवसर पर मानसिक संतुलन स्थिर रखना और शांति तथा दृढ़ता से विघ्न-बाधाओं का प्रतिकार करना ही हमारे लिए सर्वाधिक हितकारी होता है।

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा / २४

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

: युगऋषि पं. श्रीराम शर्मा आचार्य- संक्षिप्त परिचय :

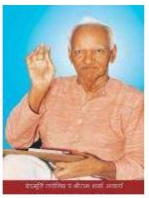

ज्यादा जानकारी यहाँ से प्राप्त करें :
http://hindi.awgp.org/about_us

- **विचारक्रान्ति अभियान के प्रणेता** : विचारों को परिस्कृत और ऊँचा उथाने मे समर्थ 3000 से भी अधिक पुस्तकों के लेखन के माध्यम से विश्वव्यापी विचार क्रान्ति अभियान की शरुआत की ।
- **वेद, पुराण, उपनिषद के प्रसिद्ध भाष्यकार** : जिन्हों ने चारों वेद, 108 उपनिषद, षड दर्शन, 20 स्मृतियाँ एवं 18 पुराणों का युगानुकूल भाष्य किया, साथ ही 19 वाँ प्रज्ञा पुराण की रचना भी की ।
- **3000 से अधिक पुस्तकों के लेखक** : मनुष्य को देवता समान, घर-परिवार को स्वर्ग, समाज को सभ्य और समग्र विश्वराष्ट्र को श्रेष्ठ बनाने मे समर्थ हजारों पुस्तकें लिखकर समयानुकूल समर्थ मार्गदर्शन प्रदान किया ।

- **युग-निर्माण योजना के सूत्रधार** : जिन्होंने शतसूत्री युग निर्माण योजना बनाकर नये युग की आधार शिला रखी ।
- **वैज्ञानिक-अध्यात्मवाद के प्रणेता** : जिन्हों ने धर्म और विज्ञान के समन्वय की प्रथम प्रयोगशाला 'ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान' स्थापित कर सिद्ध किया कि "धर्म और विज्ञान विरोधी नहीं, पुरक है "।
- **'२१ वीं सदी : उज्जवल भविष्य' के उद्‌घोषक** : जिन्हों ने '२१ वीं सदी : उज्जवल भविष्य' का नारा दिया तथा युग विभीषिकाओं से भयग्रस्त मनुष्यता को नये युग के आगमन का संदेश दिया ।
- **स्वतंत्रता संग्राम के कर्मठ सैनानी** : जिन्हों ने महात्मा गाँधी, मदन मोहन मालवीय, गुरुवर रविन्द्रनाथ टैगोर के साथ राष्ट्र की स्वाधीनता के लिए संघर्ष किया एवं स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी "श्रीराम मत्त" के रुप में प्रख्यात हुए ।
- **गायत्री के सिद्ध साधक** : जिन्हों ने गायत्री और यज्ञ को रुढियों और पाखण्ड से मुक्त कर जन-जन की उपासना का आधार तथा सद्‌बुद्धि एवं सतकर्म जागरण का माध्यम बनाया ।
- **तपस्वी** : जिन्होंने गायत्री की कठोरतम साधना कर २४-२४ लाख के २४ महापुरश्चरण २४ वर्षो में सम्पन्न किया । प्रकृति प्रकोप को शांत कर अनिष्टों को टाला, सृजन सम्भावनाओं को साकार किया ।
- **अखिल विश्व गायत्री परिवार के जनक** : जिन्हों ने अपने जीवनकाल में ही अपने साथ करोडों लोगों को आत्मियता के सूत्र में बाँधकर विश्व व्यापी 'युग निर्माण परिवार' - 'गायत्री परिवार' का गठन किया ।
- **समाज सुधारक** : जिन्हों ने नारी जागरण, व्यसन मुक्ति, आदर्श विवाह, जाति-पाँति प्रथा तथा परंपरागत रुढियों की समाप्ति हेतु अद्‌भूत प्रयास किए एवं एक आदर्श स्वरुप समाज में प्रस्तुत किया ।
- **ऋषि परम्परा के उद्धारक** : जिन्हों ने इस युग में महान ऋषियों की महान परंपराओं की पुनर्स्थापना की । लुप्तप्राय संस्कार परंपरा को पुनर्जीवित कर जन-जन को अवगत कराया ।
- **अवतारी चेतना** : जिन्होंने "धरती पर स्वर्ग के अवतरण और मनुष्य में देवत्व के जागरण" की अवतारी घोषणा को अपना जीवन लक्ष्य बनाया और चेतना का ऐसा प्रवाह चलाया कि करोंडों व्यक्ति उस ओर चल पड़े ।

गायत्री परिवार जीवन जीने कि कला के, संस्कृति के आदर्श सिद्धांतों के आधार पर परिवार,समाज,राष्ट्र युग निर्माण करने वाले व्यक्तियों का संघ है। **वसुधैवकुटुम्बकम्** की मान्यता के आदर्श का अनुकरण करते हुये हमारी प्राचीन ऋषि परम्परा का विस्तार करने वाला समूह है गायत्री परिवार। एक संत, सुधारक, लेखक, दार्शनिक, आध्यात्मिक मार्गदर्शक और दूरदर्शी युगऋषि पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी द्वारा स्थापित यह मिशन युग के परिवर्तन के लिए एक जन आंदोलन के रूप में उभरा है।

Free Download Complete Work Of Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya, Founder of All World Gayatri Pariwar
Books, Magazines, Articles, Stories, Poems, Great Personalities and many more at
www.vicharkrantibooks.org | www.awgp.org